अध्याय–द्वितीय

सूफी संगीत : उद्‌भव एवं विकास

प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक आध्यात्मिक उन्नति के लिए हर एक वर्ग में धार्मिक चेतना मानव जाति का विशेष अंग रही है धर्म ने ही मानव जाति के विकास के लिए शुरू से विशेष भूमिका निभाई है। मानव को प्रेरित करने के लिए, जीवन को अच्छे ढंग से व्यतीत करने के लिए और मानव को अमानवीय कार्यों से रोकने के लिए धार्मिक चेतना ही एक मात्र साधन है। आध्यात्मिक उन्नति के लिए हर एक धर्म या सम्प्रदाय कुछ नियमों को निर्धारित करता है जिनकी पालना करना हर व्यक्ति के लिए जरूरी होती है। जब इन नियमों को धार्मिक नेताओं द्वारा अपनी सोच अनुसार जबरदस्ती स्वीकार करवाने के लिए प्रयत्न रहते हैं तो उसका विरोध हर देश या जाति में शुरू से होता आ रहा है। इसी तरह मुसलमान फकीर भी शरीयत के कटर नियमों से नाखुश थे क्योंकि जिस इलाही भेद की बात कुरान में अंकित है उसी बात को समझते हुए सूफी फकीरों द्वारा बाहरी दिखावे के विपरीत वास्तविक सच्चाई को अपनाकर आंतरिक रहस्यों द्वारा उस अल्लाह की बंदगी को ही अपने जीवन मे लक्ष्य मानकर अग्रसर होना ही इन मुस्लिम या सूफी फकीरों का जीवन सार था। इसके अतिरिक्त सूफी परंपरा का उद्‌भव उसी समय से मान लेना उचित न्याय संगत होगा। जब किसी व्यक्ति विशेष को जो संसार के बंधनों से मुक्त होकर ईश्वर अल्लाह के ध्यान में मस्त रहने वाले को सूफी नाम से संबोधित किया गया होगा। ऐसे सूफी फकीरों ने अल्लाह, ईश्वर की सच्ची इबादत के लिए नृत्य और गायन को माध्यम बनाकर ईश्वर की बंदगी/इबादत की। इश्क के संकल्प को अपने व्यवहारिक जीवन का मुख्य अंग स्वीकार कर साहित्य या काव्य के माध्यम द्वारा उस अल्लाह ईश्वर के प्रति अपने प्रेम को ज़ाहिर किया। कालांतर से धीरे–धीरे वही काव्य, संगीत का आधार पाकर सूफी संगीत का रूप धारण कर भारतीय संगीत का विलक्षण अंग बन गया। सूफी संगीत पर विचार करने से पूर्व सूफी परंपरा के अंतर्गत विभिन्न पहलुओं सूफी शब्द, सूफीमत की ऐतिहासक पृष्ठभूमि, सूफियों का भारत में आगमन, पंजाब में सूफी परम्परा का आरम्भ एवं प्रमुख सूफी सम्प्रदाओं का वर्णन इस प्रकार है।

2.1 सूफी शब्द का अर्थ :

सूफी शब्द के लिए विद्वानों द्वारा विभिन्न मत प्रचलित हैं और विभिन्न शब्दों का ज़िक्र जैसे सूफा, सफी, सूफ सफ आदि पाया जाता है विद्वानों द्वारा अपनी सोच अनुसार सूफी शब्द से सम्बन्धित विभिन्न मतों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। कुछ विद्वानों द्वारा सूफी शब्द सफा से बना है, जिसका अर्थ पवित्रता से है। सफा उन लोगों के लिए प्रयोग किया गया जो अपनी वासनाओं से मुक्त होकर पवित्रता की ओर अग्रसर करता है। कुछ विद्वान सूफी शब्द को ग्रीक शब्द सोफिया का परिवर्तित रूप मानते हैं जिसका अर्थ ज्ञान है, भाव ज्ञानवान व्यक्ति के लिए सूफी शब्द का प्रयोग किया गया। पंजाबी साहित्य कोश अनुसार ''सूफी शब्द दी नियुक्ति यूनानी शब्द सोफिया विचों मनी गई है जिसदा भावार्थ दानिश, अकल, बुद्धि।''[1]

बहुत से विद्वान सूफी शब्दों को सूफा से संबंधित मानते हैं सूफा का भाव चबूतरे से संबंधित है और जो अरब देश में किसी मस्जिद के पास बने ऐसे उच्च स्थान को संबोधन करता है जहां हज़रत मोहम्मद साहब के मुरीद अल्लाह की बंदगी करते थे यह लोग या फकीर अपनी इबादत को बिना रुकावट मस्जिद के ऊपर बने हुए स्थान पर बैठकर इबादत या बंदगी में लीन रहते थे। एक मान्यता अनुसार, ''हज़रत मोहम्मद साहब मदीने शहर विच फकीरा वाला जीवन जिऊंदे सन।''

मोहम्मद साहब ने उस वक्त फरमाया था कि मैं फकीरी दा जीवन जियों रेहा हां और उनके मुरीद जो वराण्डे (वारतालाप स्थल) में ही गुज़ारा करते थे 'आसाब अल सफो' या अहल अल सफा अर्थात वराडें के लोग कहे जाते रहे। जिनके जीवन का लक्ष्य ही उस अल्लाह की इबादत सम्बधी कथनों, बातों का करना एवं इबादत करना। बहुत सारे विद्वान सूफी शब्द को इसी वार्ता और मुरीदों से संबंधित मानते हैं। प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर गुलवंत सिंह जी भी इसी बात का समर्थन करते हैं कि, ''सूफी 'सूफा' से बना है क्योंकि हज़रत मोहम्मद साहब के समय कुछ लोग फकीरी को ग्रहण कर दुनिया से नाता तोड़ मोहम्मद साहब के वक्त एकांत में मसीब के चबूतरे में निवास करते थे ताकि उनकी साधना में कुछ मुश्किल ना आए (जिसके अन्तर्गत विभिन्न मत हैं)।

1. जग्गी, रत्तन सिंह, पंजाबी साहित कोश, पृ–246.

डिक्शनरी ऑफ इस्लाम में भी सूफियों के सन्दर्भ में कहा गया है कि, "The name of tribe of Arabs who in the time of ignorance separated themselves from the world and engaged themselves exlusively in the service of the Makkah Temple."[1]

इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इस्लाम में सूफियों के लिए लिखा है कि ''devotees seated on the first bench of Mosque on madina in the time of prophet."[2]

''सूफी ओह लोक सन जो खानाबदोश सन बेघर सन फकीर सन दुनिया नालों ताल्लुक तोड़ चुके संन हज़रत मोहम्मद दे संगीं सन ते ओना नाल मसीत दे कोने विच रहदें सन।''[3]

''मोहम्मद साहब ने इक मस्जिद बनवाई सी जिसदे कोल इक चबूतरा सी, ओथे बैठ के लोग अल्लाह दा ध्यान करदे सी, ओही लोक सूफी अखवाए।''[4]

डिक्शनरी ऑफ इस्लाम में सूफा शब्द से मिलता जुलता शब्द सूफान मिलता है। कई विद्वान सूफी का संबंध सूफान या सुफाना से जोड़ते हैं, अर्थात् संयम, बहुत कम भोजन करना। साहित्य में भी सूफी शब्द का सन्यासियों के लिए प्रयोग किया गया जो लोग घर बार छोड़कर इबादत में लग जाते थे।

कनसाइज इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इस्लाम में सूफी शब्द की परिभाषा इस तरह है ''Sufi is properly reserved for one who has reached the end of the spiritual path''[5]

कुछ विद्वानों अनुसार सूफी शब्द सफ से बना है भाव एक कतार या विशेष श्रेणी जिसमें इस श्रेणी के लोगों को अल्लाह के दरबार में प्रथम श्रेणी में माना जाएगा, जिसकी पुष्टि पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान प्रो. गुलवंत सिंह करते हुए कहते हैं कि, ''सूफी दा शब्द अर्थ 'सफ' तों निकलिया है क्योंकि ओ अल्लाह दे दरबार विच सूफी अपने सब्र संतोष दे कारण पहली पंगत (सफ) विच गिने जानगे।''[6]

---

1. Dictionary of Islam, p. 608.
2. Encyclopedia of Islam, p. 689.
3. गुरदेव सिंह, पंजाबी सूफी सन्दर्भ ग्रन्थ, पृष्ठ–96.
4. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, संगीत, जनवरी अंक 2013, पृष्ठ–21.
5. Cyral Galaxy, The Concise encyclopedia of Islam, p. 134
6. गुरमुख सिंह (संपा.), प्रो. गुलवंत सिंह रचनावली, पृ –67.

''सूफी शब्द अरबी भाषा दे 'सफव' धातु तों निकलया है अते सफव दे अर्थ हन संशोधन करना, साफ करना, पवित्र बनाउना, आदि।''[1] सूफी शब्द का संबंध सफा से लिया जाता है जिसका अर्थ है सफाई भाव जिनका हृदय पाक पवित्र होता है, अंग्रेज़ी विद्वान निकलसन और ब्राउन का विचार है कि सूफी यूनानी भाषा के शब्द 'सोफास' से निकला है जिसका अर्थ 'बुद्धि' है, भावार्थ सूफी वह लोग हैं जिनकी बुद्धि प्रकाशित हो चुकी है।

विद्वान भाई कान सिंह नाभा जी महान कोश अनुसार, ''सूफी शब्द अरबी भाषा दे 'सूफ' तो बनया है इसका अर्थ 'पवित्रता' अते 'उन्न' है, जो कंबल अथवा कंबल दी खफनी पेहने, ओह सूफी है।''[2]

पंजाबी डिक्शनरी अनुसार, ''सूफीमत दा अनुसारी जो प्रेम नूं ही रब्ब दे मिलन दा साधन मनदा है।''[3]

पंजाबी सूफी साहित सन्दर्भ ग्रन्थ अनुसार, ''सूफी ओह शख्स है जो हमेशा आपने हाल नूं छुपाए ते सारी कायनात उसदी वलायत दी गल्ल करे।''[4]

''मुसलमानी समाज विच ऊन दे कपड़े मुड तो ही सादगी, परहेज़गारी अते पवित्रता दा चिन्न रहे हन, हज़रत मोहम्मद साहब नू काली कम्बली वाला वी केहा जांदां सी क्योंकि ओहना नूं सूफीमत दा चानण मुनारा समझया जांदा सी अते हज़रत अली नू इस दा मोढी मनदे सन।''[5]

प्रोफेसर गुलवंत सिंह शेख अबू अली हुजवीरी का हवाला देते हुए लिखते हैं कि, ''सूफी ओ है जो मानसिक पवित्रता सहित सूफ पोषी धारण करदा है कामवासना दा कठोरता पूर्वक त्याग करदा है मुस्तफी सरां दी पाबंदी अपने लिए आवश्यक संमझदा है संसार वालों विकृत व्यक्ति हो जांदां हैं।''[6] इस बात की पुष्टि बाबा फरीद जी की वाणी द्वारा इस तरह स्पष्ट होती है :

''फरीदा काले मेंडे कपड़े काला मेंडा वेस
गुनहीं भरया मैं फिरां लोक कहन दरवेस''[7]

1. कंग, गुलज़ार सिंह, सूफीमत सिलसिले अते साधक, पृ–20.
2. नाभा, भाई काहन सिंह, गुरूशब्द रत्नाकर कोश, पृ–224.
3. पंजाबी डिक्शनरी, भाग–1, भाषा विभाग पंजाब, पटियाला, पृ.–212
4. गुरदेव सिंह, पंजाबी सूफी साहित सन्दर्भ ग्रन्थ, पृ.–212
5. दौसांझ, कुलदीप कौर, पंजाबी सूफी सभ्याचार दा अध्ययन, पृ–49.
6 गुलवंत सिंह, सूफी साहित्य, भाषा विभाग, पंजाब, पृ–327.
7. श्री गुरू ग्रंथ साहिब, श्लोक बाबा फरीद, अंग–1389

भाव सूफ से बने हुए काले रंग के वस्त्र पहनते थे और साथ में बाहरी पहरावे से ज्यादा अंदरूनी सफाई और प्रभु से नजदीकी होने पर जोर देते हैं –

''फरीदा कन मुसल्ला सूफ गल, दिल काती गुडवात,
बाहर दिसे चानणा दिल अंधियारी रात''[1]

विद्वानों अनुसार अरब देश में आठवीं शताब्दी में दो तरह के संतों का ज़िक्र मिलता है, जिसमें एक वर्ग फकीरों का, जो कुरान मजीद के अंतर्गत फकीर कहे जाते थे, जो अपने पापों का प्रायश्चित अथवा दोजक नर्क के भय से इबादत करते थे, दूसरे वर्ग के सूफी फकीर जो अपने आप को खोकर वजद में आकर झूमते नाचते गाते थे।

इन्साइक्लोपीडिया ऑफ इस्लाम में भी पहले सूफी शब्द की उत्पत्ति जिस शब्द से बताई गई है, वह 'सूफ' ही है। इसमें लिखा है कि "It is formed from the no root of sufi meaning wool to devotee the practice of wear the woolen robs."[2]

उपरोक्त सूफी शब्द से संबंधित विभिन्न सूफी शब्द के बहुत से प्रायवाची शब्द स्पष्ट होते हैं और ऐसे सन्यासी वर्ग को साधारण जनता द्वारा कई तरह से सम्बोधित किया जाता रहा। वास्तविकता तो यह है कि सूफी अर्थात वह लोग जो दुनियावी बंधनों से ऊपर उठकर जाति पाति से आज़ाद होकर सभी को एक समान समझते हुए इस्लाम के कट्टर नियमों से आजाद होकर केवल उस अल्लाह की इबादत में लीन रहते थे और लोगों द्वारा उनके रहन–सहन बाहरी वस्त्रों को देख कर उनको सूफी नाम से बुलाया जाने लगा क्योंकि विभिन्न विद्वानों अनुसार हज़रत ईसा के अनुयायियों को भी उनके बाहरी वस्त्रों के कारण 'हवारी' नाम से याद किया जाता है जिससे सपष्ट है कि सूफी नामकरण भी बाहरी लिबास से संबंधित हैं चाहे उनके जीवन में सदगुण थे या नहीं। वास्तविकता में वही सूफी है जो आंतरिक तौर पर संसारिक बंधनों से मुक्त होकर उस रब की बंदगी या इबादत को ही अपने जीवन का लक्ष्य समझता है, जो किसी के प्रति भेदभाव नहीं रखता वासनाओं से ग्रसित ना हो ईश्वर की रजा समझकर सभी को एक नजर से मानता हो। रब्बी इश्क में रंगा हुआ उसी का गुणगान करें वास्तव में वही सूफी है इसी को ही

---

1. श्री गुरू ग्रंथ साहिब, श्लोक बाबा फरीद, अंग–1378
2. Encyclopedia of Islam, p. 681

तरीकत कहा जाता है और उनका लिबास उनकी पहचान है अतः सच्चा सूफी इबादत द्वारा ईश्वरीय प्रेम को ही अपना वास्तविक धर्म मानता है, इन्हीं सूफियों की विचारधारा ही सूफी लहर या सूफीमत के रूप में प्रचारित हुई।

2.2 सूफीमत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सूफीमत या सूफीवाद वास्तविकता में रब्ब अल्लाह से अभेद होने का मत है जो विश्वास और सिद्धांतों पर आधारित है जिसका आधार कुरान है सूफीवाद लोकवादी, लोकपक्षी और लोक परोपकारी इन्कलाब है जो विश्वास और सदाचारक भाईचारे के माध्यम द्वारा साधारण जनता की सेवा निर्सवार्थता से करता रहा, जो इस्लाम से भिन्न नहीं बल्कि इस्लाम की रूहानियत को दर्शाता हुआ एकता में रहने को प्रेरित करता है जो संसार के विभिन्न धर्मों की भांति इस्लामी शराअ के आधार पर अध्यात्मिक विकास करता है और मन पर विजय प्राप्त कर अपने आपकी पहचान कर आत्मिक माध्यम से परमात्मा से मिलाप करता है।

सूफीमत एक इस्लामी मत है जिसका पदार्पण अरब में हुआ, हर मज़हब में अंतर्मुखी और बाहरतमुखी पक्ष होते हैं अंतर्मुखी आध्यात्मिकता से और बाहर मुखी सामाजिक रीति–रिवाजों अनुसार होता है सूफीमत इस्लाम का अध्यात्मिक रहस्यवाद है इस रहस्यवाद में शिखर प्राप्त करना ही सूफीमत का आरंभ है तसव्वुफ कोई धर्म ना होकर आत्मज्ञान है जिसके माध्यम से उस परमात्मा की अनुभूति कण–कण में की जा सकती है।

इस्लाम धर्म की आध्यात्मिक सोच में से उपजी हुई लहर सूफीमत है जो इस्लाम का रहस्यवादी रूप है सूफी लोग ईश्वर अल्लाह को सृष्टि का आधार मानते हैं आत्मा परमात्मा और सृष्टि के भेद को ज्ञात करने का प्रयास करते हैं आत्मा को परमात्मा का अंश मानते हुए प्रभु से नाता जोड़ने का प्रयतन किया करते हैं यह नाता उस वक्त जोड़ा जा सकता है जब मानव प्रभु के रंग में अपने को रंग ले। सूफीवाद इस्लामी रहस्यवादी चिंतन धारा है जिसमें साधक एकाग्र चित्तवृत्तिओं द्वारा नियंत्रण करते हुए आंतरिक और बाहरी पवित्रता हासिल कर प्रेम द्वारा देवी तत्व में समा जाता है। 'सूफीवाद दे महान लिखारी ते विद्वान कुरान ते हदीस नू सूफीवाद दा आधार अते प्रमाण मिथदे हन।'

सूफीमत के संबंधी विद्वानों के विभिन्न मत प्राप्त होते हैं जिसके अंतर्गत प्रसिद्ध इतिहासकार प्रो. बिक्रम सिंह के कथन अनुसार, ''सूफी विचारधारा इस्लाम धर्म दे दायरे नाल बज्झी होई है जां दूजे शब्दां विच्च सूफीमत ओह विचारधारा है जिसदा पिछोकड़ इस्लामी धार्मिक नियमां नाल जुड़ेया होया है।''[1] इसी की भांति प्रो. गुलवंत सिंह कहते हैं, ''असल इस्लामी सूफीवाद ओह है जो हज़रत पैगंबर साहब दे निजी जीवन आदर्श तो अगवाई प्राप्त करें अते कुरान ऊपर आधारित होवे।''[2] सूफीमत का उपज स्थान इस्लाम ही है सूफीमत वास्तविकता में जीवन निर्वाह का ही दूसरा नाम है या यूं कहा जा सकता है कि बाहरी दिखावे की बजाय अंतरात्मा को साफ करना ही सूफीमत का धर्म है डॉ. दीवान सिंह लिखते हैं, ''जदों इह फकीर वधेरे अंतर्मुखी ते रहसवादी हो गए तां मानों ऐना दे अनुभव विचों सूफी आदर्श इस तरह रूपमान होया जिवें जुपिटर दे मत्थे विच देवी मिनरवा प्रकट होई सी, एन्ना पहले सूफियां ने अपना सूफी अनुभव मानो कुरान दे पन्नेयां विचों फोल के लब लिया पर इह घाल कमाई सारी ओहना दे अंदर होइ।''[3] सूफीमत के पैदा होने को लेकर विद्वानों में विभिन्न मत प्राप्त होते हैं जिसके अंतर्गत विद्वानों अनुसार इस्लाम का आरंभ हज़रत मोहम्मद साहब से होता है जिनका समय काल 6वीं 7वीं सदी था और विद्वानों अनुसार हज़रत मोहम्मद साहब को ही पहला सूफी मानते हैं। उनके ससुर अबू बकर उनके प्रतिनिधि चुने गए उनके बाद लगातार हज़रत उमर, उस्मान, हज़रत अली उत्तराधिकारी हुए।

दूसरे मत अनुसार सबसे पहले सूफी सलमान पारसी शिया संप्रदाय से थे यह 9वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुए, सलमान पारसी हज़रत अली को हज़रत मोहम्मद साहब के वास्तविक उत्तराधिकारी मानते थे, इसके अतिरिक्त प्रोफेसर ब्राउन अनुसार, ''सूफीमत का आरम्भ 8 वीं शताब्दी के अंत और 9वीं शताब्दी के आरम्भ में मानते हैं।''[4] निकल्सन अनुसार, ''पहला सूफी अबू हाशिम उस्मान बिन–शरीफ कूफा दा रहन वाला सी जो आठवीं सदी दे विच हुआ।''[5] प्रोफेसर गुलवंत सिंह के

1. बिक्रम सिंह, (संपा.), पंजाबी सूफी कावि, पृ–9
2. गुरमुख सिंह संपा, प्रो. गुलवंत सिंह, रचनावली, पृ–70.
3. दीवान सिंह, सूफीवाद ते होर लेख, पृ. 22.
4. Brown, E.G. Prof. , A Litrary History of Persian, Vol. I, p. 418.
5. Jami, Abdul Rahman, A Litrary Histrary of Abs, p. 229 (Note : It was first applied to Abu Hashim of Kufa before 800 A.C.)

मतानुसार, ''सूफ़ीवाद मुकम्मल इस्लामी जीवन दा ही अंग है जिसदे बुनियादी सिद्धांत कुरान उप्पर आधारित हन।'' [1]

प्रोफेसर गुरदित सिंह प्रेमी के सूफीमत अनुसार तीन सार हैं कि :

1. ''सूफीमत कोई इस्लाम तो बाहर दा मत नहीं सगों इस्लाम दे अंदर फैली एक सुधार दी लहर सी जिस दा मुढ हज़रत मोहम्मद साहब दे जीवन वेले ही बझ चुक्का सी।

2. सूफीमत दा मुड अरब विच ही बज्जा ना के ईरान विच सूफी विचारधारा दा वडड़ा विकास होआ अते इस उत्ते यूनानी ते भारती विचारधारा दा डूंगा प्रभाव प्या।

3. सब सूफी आरंम्भ विच इस्लाम दे प्रचारक सन।''[2]

इसके अतिरिक्त शुरुआती दौर के सूफी साधकों या सूफीमत संबंधित फकीरों की बात की जाए तो हमें इब्राहिम बिन आदिम, हसन बसरी, राबिया आदि सूफी साधक मिलते हैं।

उपरोक्त दिए गए विद्वानों के द्वारा सूफीमत संबंधी दिए गए कथनों से स्पष्ट हो जाता है के सूफीमत इस्लाम के रहस्यों को आंतरिक रूप से ज्ञात करने वाला टोला (समूह) था जिन्होंने हज़रत मोहम्मद साहब की रहमत प्राप्त की, यही कारण था कि बहुगिनती सूफी कहलाए जाने वाले अपने आप को मोहम्मद साहब से जोड़ते हैं। सूफीमत को स्थापित करने वाले प्राथमिक लोग हज़रत मोहम्मद साहब के साथी ही समझे जाते है और इस्लामी अनुशासन से मुक्त होकर प्रेम और मोहब्बत को वास्तविक इस्लामी ईबादत मानते हैं। इस तरह सूफीमत रहस्यवादी लहर धीरे–धीरे अपना प्रचार–प्रसार करती हुई अरब देशों से निकलकर समय की हुकूमतों के सहारे विभिन्न व्यापारिक संबंध रखने वाले देशों में भी अपना प्रभाव बनाती गई जिसके फलस्वरुप भारत देश में भी सूफीमत का प्रभाव होने लगा। अतः सूफीमत से संबंधित सूफी फकीरों या संतो साधकों के ठिकाने विभिन्न स्थानों पर उद्भव होने लगे और पंजाब प्रदेश भारत का मुख्य द्वार होने के कारण यहां पर भी सूफी फकीरों का प्रभाव होने लगा जिसके अंतर्गत दाता गंज बख्श शेख मखदूम अली

1. गुलवंत सिंह, प्रो.,अवारिश–उल–मुवारिफ, पृ. 52.
2. प्रेमी, गुरदित सिंह, साहित्य समाचार, सूफी कावि अंक, पृ. 110.

हुजवीरी जो अपने समय के प्रसिद्ध सूफी फकीर हुए हैं, जो सूफीमत के प्रचार हेतु लाहौर में आकर रहने लगे इस तरह सूफीमत का प्रभाव भारत में सबसे पहले पंजाब क्षेत्र में पड़ा यहीं से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में सूफीमत का प्रभाव पढ़ने लगा।

2.3 भारत में सूफियों का आरंभ :

इस्लाम से उत्पन्न सूफीमत विचारधारा विश्व प्रसिद्ध है किसी भी परंपरा का विश्व प्रसिद्ध होना बिना आपसी संबंधों, तालमेल, व्यापार आदि के बिना संभव नहीं, तो स्पष्ट है कि वर्तमान समय में एक दूसरी परंपरा के विकास के लिए किसी दूसरे देशों के संबंधों से ही संभव हो पाया। तभी विभिन्न देशों की संस्कृति का व्यक्ति को ज्ञान हुआ, ऐसा ही सूफीमत के विकास में होना स्वभाविक था और विदेशों में सूफीमत का प्रचार आठवीं सदी में प्रारंभ हुआ सूफीमत से सहमत लोग अपनी कुरीतियों और समाज में प्रचलित अमानवीय कारणों से भयभीत होकर बस अल्लाह ईश्वर से प्रार्थना करते थे। अरब और भारत का संबंध व्यापार सम्बन्धों से शुरू हुआ। इसका मुख्य माधय्म समुद्र के रास्ते से होने वाला व्यापार था और व्यापारी जहाज़ों के माध्यम से समुद्री तटों पर आते रहते थे और समुद्री तटों से वाकिफ थे। धीरे–धीरे वही व्यापारी भारत के समुद्री तटों पर बने इलाकों में रहने लगे। ऐसे ही सूफीमत से संबंधित सूफी फकीर भी इन्हीं रास्तों के माध्यम से सूफीमत के प्रचार के लिए भारत में प्रवेश हुए, इसके अतिरिक्त भारत की तरफ आने वाले 'खुश्की' और 'दर्रा–ए–ख़ैबर' रास्तों के माध्यम से भी मुस्लमान लोग या फकीर भारत में प्रविष्ट हुए 'दर्रा–ए–ख़ैबर' की तरफ से सूफी साधकों का पहला संपर्क पंजाब से हुआ अथवा मुस्लमानों के आगमन से भारत में इस्लाम का प्रचार शुरू हुआ जिसके बारे में डॉ. मोहम्मद हबीब का कथन है, ''सिंध विच अरब व्यापारियां राहीं इस्लाम फैलना शुरू होया सी, मगरों मोहम्मद बिन कासिम द्वारा इह खेतर फतेह होण नाल, मुसलमानां दी आबादी ऐथे वदन लगी, उलमा अते दरवेश ऐथे वसण लग्गे। इस काल विच मुल्तान भी सिंध दे खेतर विच शामिल सी, इस करके ऐना दा प्रभाव पंजाब तक फैलया, ऐना विच शेख तुराबी मुडले काल विच आ गए, एह 788 ई. विच रब्ब नू प्यारे होय जद कि शेख सैफुद्दीन गजरूनी अते शाह यूसफ ने

क्रमानुसार 1007 अते 1152 ई. विच वफात (दगहांत) पाई।''[1] भारत देश की धरती ऋषि मुनियों की धरती होने के कारण सूफी फकीर भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। इसी बात की पुष्टि डॉ. मोहम्मद हबीब ने एक जईफ हदीस द्वारा प्रमाणित करते हुआ कहा है कि, ''पैगंबर हज़रत मोहम्मद ने वी भारत दी तारीफ कीती अते दस्या है के मेनू भारत वल्लों आउण वालियां ठंडियां ते रूहानियत भरियां खुशबूआं आउंदियां हन।''[2]

मुसलमान सूफी विभिन्न मार्गों के माध्यम से प्रचार हेतु हिंदुस्तान में पहुंचे उस वक्त हिंदुस्तान में सूफियों या इस्लाम से कोई वाकिफ नहीं था। मुसलमान सूफी फकीर शांतमई, प्रेमभाव अथवा सहनशीलता प्रवृत्ति के लोग थे। उन्होंने भारतीयों की संस्कृति को समझा और जल्द ही भारतीय लोगों में घुल मिल गए। सूफियों की सादगी, दयाभाव, धार्मिक कट्टरता से मुक्त और संसार के लोभ प्रति विकृत भावना आदि बातों ने भारतीयों के दिलों को छू लिया। सूफी मुस्लिमों के भारत में प्रवेश के कारण ही इस्लाम और भारत का एक दूसरे से आना जाना शुरू हुआ। इस बात की पुष्टि करते हुए आचार्य बृहस्पति कहते हैं कि, ''यह ऐतिहासिक तथ्य है के जहां जहां भारत में मुस्लिम आक्रांता आए वहां वहां सूफी फकीर पहले से विद्यमान थे, आक्रांताओं की सेना के साथ ही विद्वान और सूफी रहा करते थे।''[3]

हिंदुस्तान और अरब देशों के राजनीतिक संबंधों के कारण पैदा हुए सरहदी झगड़ों से ही अरबी शासकों ने समुद्र के नजदीक क्षेत्रों को लूटना शुरू किया सबसे पहला हमला 636 ई. में किया जिसमें अरबों को हार का सामना करना पड़ा। 712 ई. में सिंध और मुल्तान पर मुसलमानों द्वारा हमला किया फलस्वरूप सिंध और मुल्तान पर कब्जा कर लिया गया, इन हमलों द्वारा बहुत से सूफी फकीरों का भारत में आगमन हुआ। अरब सैनिक भारतीय स्त्रियों के साथ विवाह कर भारत में ही रहने लगे। सूफी फकीर भारतीय लोगों के साथ मिलकर भाषा सीखने और धर्म प्रचार करने लगे इन सूफी फकीरों ने प्रेम भाव से भारतीय लोगों के मन में लोकप्रियता हासिल की। भारत का प्रवेश द्वार पंजाब होने की वजह से सबसे पहले सूफी फकीर इसी क्षेत्र पर अपना प्रचार करने लगे।

1. हबीब, मोहम्मद, भारत विच सूफीवाद चौणवें सन्दर्भ, पृ.7.
2. वही, पृ.2.
3. आचार्य, बृहस्पति, मुस्लमान और भारतीय संगीत, पृ. 16.

2.4 पंजाब में सूफी परम्परा का आरंभ :

भारत में मुस्लिम शासकों की स्थापना होने से पहले ही पंजाब प्रदेश में सूफी फकीरों का आगमन आरंभ हो गया था। जालंधर में एक मुस्लिम फकीर इमाम नसरुद्दीन का मकबरा मौजूद है, जिस पर उनकी मृत्यु का समय 334 हिज़्री (945ई.) लिखा गया है। 975 ईस्वी में गजरूनी और अब्बू इस्हाक, सूफी सफीउद्दीन मुल्तान की इस्माईल सल्तनत में पहुंचे और वहीं अपना बसेरा कर लिया। उनकी मौत 1007 ईस्वी में इसी स्थान पर हुई। साधू राम शारदा अनुसार, ''ललीशाहियां दे गज़नबियाँ हत्थों हार खान मगरों सूफी नवें मार्ग राहीं वी लाहौर पहुंचने शुरू हो गए।''[1]

लाहौर पहुंचने वाले मुख्य सूफियों में से शेख इस्माइल बुखारी लाहौरी, मीर हुसैन ज़ज़ानी, अब्दुल हसन अली हुजवीरी मृत्यु 1072 ईसवी अहमद तक्ता महावरी के रास्ते पहुँचे। युसूफ गर्देज़ी की संख्या सुल्तान में थी जो 1152ई में मृत्यु को प्राप्त हुए। सुल्तान को सैय्यद अहमद उर्फ लख्खी दाता ने पश्चिमी पंजाब में सधोरा और धोंकान में अपने पंथ का प्रचार कर बहुत नाम कमाया और लाहौर में रहते ही हुजवीरी साहब ने अनेकों पुस्तकों की रचना की और लखीदाता की लोकप्रियता से उनकी मान्यता रही।

पंजाब में बाकी हिंदुस्तान के बजाय मुसलमानों की आमद तकरीबन 2 सदियां पहले हुई सुबुक्तगीन के बाद उसके बेटे मोहम्मद गौरी के हमले शुरू हुए जिनके परिणाम स्वरूप पंजाब पर उसका कब्जा हो गया यह घटना 11 वीं सदी के शुरू में घटी। उसके बाद चाहे हाकम खानदान बदलते रहे मगर पंजाब पर राज ईरान, अफगान हाकिमों की हकूमत लगातार चलती रही। इस तरह बाकी के मुल्क से अलग हुए पंजाब को तकरीबन दो सदियां बीत गईं। पंजाब के प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. गुरचरन सिंह लिखते हैं, ''12 वीं सदी के अंत में जाकर कहीं दिल्ली पर पहली बार पंजाब के उस समय के हाकम शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी का कब्जा हुआ और पृथ्वीराज चौहान की हार से पंजाब से आगे निकल कर इस्लाम और इस्लाम के साथ–साथ सूफी दरवेश वहां पहुंचे और आगे बढ़ने शुरू हुए।''[2]

---

1. शारदा, साधू राम, सूफीमत अते पंजाबी सूफी साहित, पृ.–101
2. गुरचरन सिंह, सूफीवाद अते पंजाबी सूफी कावि दा इतिहास, पृ. 18

अंतः स्पष्ट हो जाता है कि प्रसिद्ध सूफी फकीर सूफीमत के प्रचार हेतु विभिन्न स्थलों पर रहने लगे कालांतर से वही स्थल ठिकानों एवं संप्रदाय या सिलसिलों का रूप धारण कर गए हर सिलसिले के सूफी फकीरों ने सूफीमत के प्रचार हेतु कुछ सिद्धांत कायम किए अंतः सूफीमत के विभिन्न संप्रदाय या सिलसिले अपनी अपनी विशेषता के फलस्वरूप प्रसिद्ध हुए जिनमें से मुख्य रुप में प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय सिलसिलों का वर्णन इस तारह है।

2.5 सूफी सिलसिले या सम्प्रदाय :

2.5.1 चिश्ती सिलसिला :

सूफीमत के अंतर्गत चिश्ती संप्रदाय प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय सिलसिला है जिसके फलस्वरूप लाखों गैर मुस्लिम लोग भी इससे प्रभावित होकर सूफीमत के माध्यम से इस्लाम की तरफ अग्रसर हुए। विद्वानों अनुसार इस सिलसिले के संस्थापक ख्वाजा अबू इसहाक शामी जी का देहांत 940 ई. में हुआ था जो बसरा के सूफी शेख मिमशाद अली दीन वरी के मुरीद थे। शेख मिमशाद अली बगदाद के प्रसिद्ध सूफी अब्दुल कासिम अल जुनैद से धार्मिक शिक्षा प्राप्त कर ईरान के इलाके चिश्त में आकर रहने लगे। जिससे उनके नाम के साथ चिश्ती शब्द जुड़ गया। चिश्ती साहब के देहांत के पश्चात ख्वाजा अबू अहमद जी का देहांत 966 ई. ख्वाजा अब्बू मोहम्मद जी का देहांत 1020 ईस्वी, ख्वाजा अबू युसूफ जी का देहांत 1067 ई., ख्वाजा मवदूद जी का देहांत 1133ई. आदि निरंतर सिलसिले के संचालक बदलते रहे। इसी सिलसिले के संचालक ख्वाजा उस्मान चिश्ती से शिक्षा प्राप्त करने वालों में प्रसिद्ध सूफी ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती थे। भारत में चिश्ती सिलसिले की स्थापना करने वाले मुख्य दरवेश ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती (1142 ई से 1135 ई), 1165 में भारत आए और चिश्ती सिलसिले के प्रचार हेतु अजमेर को अपना ठिकाना बनाया।

एक कथन अनुसार चिश्ती सिलसिले के सूफी फकीर ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती जी ने इस सिलसिले के आठवें खलीफा बनने से पूर्व अनेकों इस्लामी मुल्कों की यात्रा की, वहां के क्षेत्रों के प्रसिद्ध सूफी साधकों से इबादत संबंधी गूढ़ ज्ञान की बातों पर चर्चा की। इसी समय के चलते ख्वाजा मोइनुद्दीन को हज़रत मोहम्मद

साहब के सपने में दर्शन हुए और उन्होंने ख्वाजा मोइनुद्दीन को भारत में इस्लामी सूफीमत का प्रचार करने के आदेश दिया।

यह भी माना जाता है कि यह संप्रदाय ख्वाजा हसन बसरी से प्रारंभ हुई उन्होंने हज़रत अली से फकीरी प्राप्त की इनके आठ उत्तराधिकारी ख्वाजा अब्बू व इसहाक शामी खुरासान के चिश्ती नगर से संबंधित थे और इनके पांच मुरीद इसी स्थान पर टिके रहे इस कारण इस संप्रदाय का नाम चिश्ती पड़ा और उनके मुरीद ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती, बादशाह बलबन के समय ईरान के एक शहर संजर से भारत आए और अजमेर में अपनी गद्दी स्थापित की और यह भी मान्यता है कि कव्वाली गायन का प्रचार 13वीं शताब्दी में ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती से प्रारंभ हुआ। सूफियों के सभी संप्रदायों में से सबसे अधिक संगीत का प्रचार प्रसार चिश्ती संप्रदाय ने किया, हर वक्त चिश्ती संप्रदाय में कव्वाल मौजूद रहते थे और बहुत से हिंदुस्तानी गायक भी चिश्ती संप्रदाय से प्रभावित होकर कव्वाली करने लगे क्योंकि सूफी फकीरों की दया भाव प्रेमभाव आदि बातों का असर हर व्यक्ति पर पड़ा।

राम पूजन तिवारी अनुसार, ''चिश्ती संप्रदाय के प्रवर्तक इसहाक शामी चिश्ती माने जाते हैं लेकिन बहुत लोग ऐसे हैं जो ख्वाजा अब्बू अब्दाल चिश्ती को इसका प्रवर्तक मानते हैं और कितने ही ख्वाजा मोइनुद्दीन को मानते हैं।''[1]

सूफीमत के ज्ञाता डॉ. नरेश जी के अनुसार ''इस संप्रदाय की नींव हज़रत अब्बू अहमद अब्दाल चिश्ती ने (874–956 ई. में) अफगानिस्तान के शहर चिश्त नामक नगर में रखी थी।''[2] खलील अहमद निजामी भी इसी बात का समर्थन करते हुए कहते हैं कि इस संप्रदाय की स्थापना अफगानिस्तान में अब्बू इसहाक शामी द्वारा हुई। इसके अतिरिक्त सूफीमत के प्रचार प्रसार के लिए चिश्ती सिलसिले की भारत में विशेष भूमिका रही जिसके अंतर्गत सूफीमत के माध्यम से इस्लामी ताकतों को बढ़ावा मिला। आचार्य बृहस्पति अनुसार, ''यदि यह कहा जाए कि भारत में जो बड़ी–बड़ी हुकूमतें कायम हुई उनके लिए चिश्ती परंपरा के सूफियों ने मार्ग समतल कर दिए तो यह कहना अनुचित नहीं होगा।''[3] इसके अतिरिक्त प्रसिद्ध इतिहासकार

1. तिवारी, राम पूजन, सूफीमत, साधना और साहित्य, पृ.443.
2. नरेश, सूफीमत इतिहास और दर्शन, पृ. 42.
3. बृहस्पति, आचार्य, मुस्लमान और भारतीय संगीत, पृ.26.

मनमोहन सिंह अनुसार, ''सय्यद मोहम्मद हाफिज ने निश्चित कीता है कि भारत दा सब तों पुराना सूफी सम्प्रदाय चिश्ती सी।''[1]

उपरोक्त सूफी सिलसिले से संबंधित चर्चा से पता चलता है कि चिश्ती संप्रदाय सूफियों के प्रसिद्ध संप्रदाय रही है चिश्ती संप्रदाय को भारत में स्थापित करने वाले प्रथम सूफी फकीर ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती थे जिनका जन्म 1142 ईस्वी में सीस्तान के संजर नामक स्थान में हुआ विभिन्न हुकूमतों के हमलों के कारण इन्होंने फकीरों का जीवन अपनाकर भ्रमण किया और विभिन्न मुस्लिम देशों एवं शहरों का भ्रमण करते हिंदुस्तान पहुंचे और अजमेर को अपना ठिकाना बनाया सूफीमत के प्रचार के लिए भारत की भाषाओं को सीखा।

डॉक्टर धनवंत कौर अनुसार, ''सूफियां विच्चों ख्वाजा मोइनुद्दीन अजेहे बुजुर्ग हन जिन्ना ने हिंदुस्तान दी जुबान सिखी अते आम बोलचाल च इस्तेमाल कीती। ऐना दे पैरोकारां दी गल बात च ज्यादा हिंदी शब्द प्रयोग कीते गए, कई थावां ते पूरे दे पूरे जुमले हिंदुस्तानी मिलदे हन।''[2] ''इस तरह चिश्ती ने साहब ईलम और अमल का पाठ पढ़ाते हुए तसव्वुफ के रूहानियत मार्ग पर लोगों को अग्रसर किया और अजमेर में ही चिश्ती साहब का अंतिम समय बीता, इसके पश्चात अजमेर में इनकी दरगाह बनाई गई जहां वर्तमान समय में भी उर्स मनाया जाता है। चिश्ती साहब उदारवादी प्रवृत्ति के मालिक थे जो बेसहारा गरीब लोगों को सहारा देते थे विद्वानों अनुसार, ''चिश्ती सिलसिले के भारतीय सूफियों में हज़रत ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती (जन्म 1141 ई., निधन 1236 ई.) सबसे प्रसिद्ध संत थे जो अजमेर के ख्वाजा उर्फ 'गरीब नवाज़' के नाम से भी प्रसिद्ध हैं इसलिए सूफियों में अजमेर को 'चिश्तियां का मक्का' भी कहा जाता है।''[3] चिश्ती सिलसिले का लोकप्रिय होने का सबसे बड़ा कारण है यह है कि इस सिलसिले के सूफियों ने साधारण जन मानस के अनुसार सूफीमत का प्रचार प्रसार किया। आचार्य बृहस्पति अनुसार, ''चिश्ती परंपरा के सूफियों ने लोक भाषा सीखी, सामान्य जनता के स्तर पर उतरकर सरल शब्दों में अपनी बात कही, वे भारत के लोग जीवन में रमे इन्होंने यहीं की धुनों में

---

1. मनमोहन सिंह, सूफीमत अते धार्मिक लहरां, पृ. 7.
2. धनवंत कौर (संपा.), सूफियाना अदबी रिवायत, पृ.191.
3. काज़मी, स्वामी वाहिद, संगीत, मुस्लमान और भारतीय संगीत अंक, जनवरी 2013, पृ. 125.

अपने गीत गाए।"[1] चिश्ती संप्रदाय भारत में इसलिए लोकप्रिय रही क्योंकि संगीत की इस सिलसिले में विशेष भूमिका रही।

प्रसिद्ध संगीत विद्वान जगीर सिंह अनुसार, "सूफी साधना दे अंदर समाअ दा विशेष महत्व रेहा है। सूफियां दिया विभिन्न संस्थावां विच खासकर चिश्ती सिलसिले दे सूफी दरवेशां दे जीवन अते बाणी रचना तो ए गल्ल भली–भांति उजागर हुंदी है के ऐना सूफियां दिया दरगाहां विच रब्बी उस्तत दा संगीत सुनन दी रवायत मौजूद सी।"[2] इस तरह इस सिलसिले के अनुयायियों द्वारा सूफीमत का प्रचार प्रसार बढ़ता गया ख्वाजा मोइनुद्दीन के दो प्रिय शागिर्द जिनमें ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी और हमीदुद्दीन नागौरी हुए हैं और ख्वाजा बख्तियार काकी ही मोइनुद्दीन के पश्चात इस सिलसिले के उत्तराधिकारी हुए और सूफीमत के प्रचार हेतु अपनी कुछ वस्तुओं को सौंपकर दिल्ली में चिश्ती संप्रदाय के प्रचार के लिए भेज दिया जहां काकी साहब ने बादशाह इल्तुतमिश को चिश्ती संप्रदाय का अनुयाई बनाया। काकी को संगीत से बहुत लगाव था। परशुराम चतुर्वेदी अनुसार, "काकी ने अपने संप्रदाय दे उतसवा विच समाअ नू अर्थात संगीत मंडलीयां नू वी महत्व दिता सी।"[3] डॉ. मुहम्मद हबीब अनुसार, "शेख बख्तियार काकी दे समय समाअ भाव संगीत दा अदुती माहौल बण गया सी।"[4] बख्तियार काकी के शागिर्द बाबा फरीद हुए हैं स्वभाविक है समाअ का प्रभाव बाबा फरीद होना। हरिश्चंद्र वास्तव अनुसार, "सूफी साधकों में चिश्ती संप्रदाय के बाबा फरीद शकरगंज संगीत प्रेमी थे कहा जाता है कि कव्वाली सुनते हुए अनेक सूफी साधकों ने प्राण विसर्जित किए थे दरगांहों में एकत्रित जनसमूह प्रेम मार्गी सूफियों की कव्वाली से विभोर हो उठते थे।"[5]

ख्वाजा बख्तियार काकी के बाद इस सिलसिले के उत्तराधिकारी फरीदद्धीन शकरगंज हुए जिनके समय काल संबंधी विद्वानों में विभिन्न मत पाए जाते हैं।सर्वमानित मत अनुसार बाबा फरीद जी का समय काल 1173–1266 ई है, डॉ नरेश अनुसार बाबा फरीद जी का जन्म 1172 ईस्वी में मुल्तान के गांव खोतवाल में हुआ फरीद की माता धार्मिक स्वभाव के थे। बचपन में ही शेख फरीद मुल्तान चले

1. बृहस्पति, आचार्य, मुस्लमान और भारतीय संगीत, पृ.23.
2. जगीर सिंह, फरीद बाणी : संगीतक परिपेख, पृ. 74.
3. चतुर्वेदी, श्री परशुराम, सूफी कावि संग्रह, पृ.52.
4. हबीब, मोहम्मद, भारत विच सूफीवाद : चौणवें सन्दर्भ, पृ.91.
5. वास्तव, श्री हरीशचन्द्र, संगीत निबन्ध संग्रह, पृ.44.

गए थे। जहां उनकी मुलाकात बख्तियार काकी साहब से हुई और उनके मुरीद हो गए इसी के अतिरिक्त फरीद ही काकी के बाद चिश्ती सिलसिले के उत्तराधिकारी नियुक्त हुए।

एक अटल सच्चाई है कि बाबा फरीद ने ही पंजाबी कविता का आधार बनाया और पंजाबी सूफी कविता के अत्यंत महत्वपूर्ण सूफी संत कहलाए यह बात उनकी विद्वता का प्रमाण है इसके अतिरिक्त बाबा जी संगीत के बहुत शौकीन थे और समाअ की महफिल का आनंद लेते थे उनकी काव्य और संगीतिक समझ का ही प्रमाण है कि उनके द्वारा रचित बाणी को सिख धर्म के पवित्र ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल किया गया है।

डॉक्टर मुहम्मद हबीब अनुसार, ''चिश्ती सूफियां ने भारती संस्कृतिक गतिविधियां विच वी दिलचस्पी दिखाई। समाअ दे सूफी सिद्धांत नू खास तौर ते अपनाया, जिस विच कव्वाली अते शेयरो शायरी लोकां नू बहुत आकर्षित कर दिया सन्न् भारती संतां दा पहरावा अपने लिबास दा हिस्सा बनाया।''[1]

बाबा फरीद जी के आध्यात्मिक ज्ञान के द्वारा सूफीमत सिलसिले ने खूब प्रचार और प्रसार किया इनके मुरीदों में निजामुद्दीन औलिया, हज़रत अली, अहमद साबिर और शेख आरिफ बड़े प्रसिद्ध सूफी संत हुए हैं।

चिश्ती सिलसिले में संगीत की विशेषता है कि वह समाओं के आयोजन के वक्त हाल की अवस्था में ही चले जाते थे और काकी साहब हाल की अवस्था में ही इस फानी संसार को अलविदा कह गए। बाबा फरीद जी ने चिश्ती परंपरा का पंजाब में सबसे ज्यादा प्रचार किया और पंजाब के पाकपटन नामक स्थान पर बड़ी तपस्या की, वहीं पर इनके जीवन का अंतिम समय बीता और वहीं पर इनकी मज़ार बनी है जहां हर साल उर्स मनाया जाता है। बाबा फरीद जी की लोकप्रियता एवं प्रसिद्धि फलसवरूप ही फरीदीया उप सिलसिला भी उत्पन्न हुआ जो उनकी रूहानी शख्सियत का प्रमाण है। चिश्ती सिलसिला भारत में स्थापित होने वाले सिलसिलों मे से ऐसा सिलसिला है जिसके केंद्र हर प्रदेश में है. हर धर्म के लोगों का इस सिलसिले में सम्मान किया जाता है और कुछ नियमों का पालन भी अवश्य करना होता है। अल्लाह के नाम पर भोजन करना, अपने भोजन में से किसी भूखे को भी

1. हबीब, मोहम्मद, भारत विच सूफीवादः चौणवें सन्दर्भ, पृ.6.

भोजन खिलाना, सारी जिंदगी अल्लाह की इबादत करनी, मन की इच्छाओं को खत्म करना, प्रेम से आपसी मिलाप रखना आदि इस सिलसिले की प्रमुख विशेषताएं हैं। डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग अनुसार, ''चिशती संप्रदाय के सूफी लोग संगीत को अपनी साधना का स्रोत मानते हैं, जो सौंदर्य की ऊंचाइयों तक पहुंचकर ऐसी पूर्णता प्रदान करता है जिसके लिए प्रत्येक आत्मा ललायित रहती है।''[1] आचार्य बृहस्पति अनुसार, ''चिश्ती संप्रदाय संगीत को ईश्वर प्राप्ति का एक साधन मानता था अंतः मोइनुद्दीन चिश्ती अजमेरी स्वयं भक्तिपूरक संगीत सुनते थे।''[2]

2.5.2 सुहरावर्दी सिलसिला :

सुहरावर्दी सूफियों का प्रमुख संप्रदाय हैं इस संप्रदाय के संस्थापक शेख शहाबुद्दीन सुहरावर्दी उच्च कोटि के विद्वान थे, जो कभी भी भारत में नहीं आए, शेख शहाबुद्दीन तपस्वी सूफी संत थे और हदीस के व्याख्याकार होने की वजह से लोग उनसे प्रभावित होते थे। शरीयत के आदेश अनुसार इस सिलसिले के सूफी संतों को बहुत सम्मान दिया जाता रहा। सुहरावर्दी सूफियों का दूसरा प्रसिद्ध सिलसिला है सुहरावर्दी सिलसिले का प्रारंभ भारत में शेख शहाबुद्दीन के मुरीदों द्वारा किया गया सुहरावर्दी सिलसिले संबंधी आचार्य बृहस्पति कहते हैं कि, ''भारतवर्ष के सूफियों में सुहरावर्दी परंपरा के संस्थापक शेख बहाउद्दीन जकरिया, मुल्तानी (मृत्यु 1267) संगीत के महान आचार्य और संरक्षक थे।''[3]

प्रसिद्ध सूफी ख्वाजा बहाउद्दीन ज़करिया साहब ने बगदाद में शेख शहाबुद्दीन से आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करके भारत में सुहरावर्दी सिलसिले का प्रचार किया। इस सिलसिले के सूफी संतों की शख्सियत को स्पष्ट करते हुए ख्वाजा हसन निजामी इस संप्रदाय के बारे में कहते हैं कि सुहरावर्दी सूफी सर्वप्रथम भारत में आए। इस सिलसिले के सूफी संतो ने भारत में अनेकों स्थानों पर ठिकाने बनाएं और सुहरावर्दी संप्रदाय का प्रचार प्रसार किया जिसके बारे में प्रसिद्ध लेखक मनमोहन सिंह कहते हैं कि, ''इस फिरके दे अनेक संत होए जिन्ना ने पंजाब

---

1. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, संगीत, मुस्लमान और भारतीय संगीत अंक, जनवरी 2013, पृ. 24.
2. बृहस्पति, आचार्य, संगीत, मुस्लमान और भारतीय संगीत अंक, जनवरी 2013, पृ. 67.
3. वही, पृ. 33.

गुजरात बिहार अते बंगाल आदि प्रांतां विच सूफीमत दा प्रचार कीता अते अनेक स्थानां ते धार्मिक अते संस्कृतिक केंद्र स्थापित कीते।''[1]

इस संप्रदाय में प्रवेश होने के लिए कुछ नियम स्थापित हैं जिसके बारे में डॉक्टर हरजिंदर सिंह ढिल्लों अनुसार, ''इस संप्रदाय विच प्रवेश करने वाले साधक वास्ते सब तो प्रथम अपने पापां दा प्रायश्चित करना पैंदा है इस पिछों उस नू पंज वार कलमा पढ़ना पैंदा अते धर्म उत्ते पूरा इमान लियोन लई केहा जांदां है नमाज अते रोज़े रखण उत्ते पूरा ज़ोर दिता जांदा है।''[2] इसके अतिरिक्त संप्रदाय की प्रसिद्ध पुस्तक अवारिफ–उल–मुआरिफ लोकप्रिय है जो सभी सिलसिलों में सम्मान के साथ पढ़ी जाती है और यह कहा जाता है कि अगर कोई किसी मुरशिद का मुरीद नहीं हुआ तो वह अवारिफ–उल–मुआरिफ किताब को पढ़कर अध्यात्म के रहस्यों को जान सकता है। इसके अतिरिक्त इस संप्रदाय के सूफी संतों द्वारा संगीत को लेकर भी नए प्रयोग किए गए। शेख बहाउद्दीन साहब ने हिंदुस्तानी और ईरानी संगीत को मिश्रित करके नए प्रयोग किए और अरबी संगीत को आधार मानकर हिंदुस्तानी धुनों में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया लेकिन साधारण लोगों को यह प्रयोग पसंद नहीं आया। परिणामस्वरूप इस संप्रदाय के कलाम ज़्यादा प्रसिद्धि हासिल नहीं कर पाए। इसके अतिरिक्त इस सिलसिले की विभिन्न शाखाएं प्रचार में आई और उन्होंने अपनी नई नियमावली को सूफीमत के विपरीत बनाने का प्रयास किया जिसके फलस्वरुप मलामाती (निंदनीय) कहलाए और इनका वर्गीकरण **बा–शराअ** (वैध) और **बे–शराअ** (अवैध) संकेतों द्वारा किया गया।

बा–शराअ अनुसार–'जलाली शाखा, मखदूम ए जहानिआं, मीरान शाही, इस्माइल शाही, दौला शाही।

बे–शराअ अनुसार – लाल शाह बाज़िया, रसूल शाही, सुहागिया।

जलाली संप्रदाय– इस शाखा को भावदीन ज़करिया के मुरीद सैय्यद जलालुद्दीन शाह मीर ने चलाया था। इस सिलसिले के सूफी साधक सर पर काले धागे, बाजू पर ताबीज़, हाथ में सारंगी ले कर बजाते थे।

---

1. मनमोहन सिंह, सूफीमत अते धार्मिक लहरां, पृ. 8.
2. ढिल्लों, हरजिंदर सिंह, पंजाबी सूफी कावि अते शरीअत, पृ. 40

मखदूम–ए–जहानिया– इस शाखा को 'जहांगश्त बुखारी' भी कहा जाता है। मीराशाह–मीरा शाही उप–सिलसिला मीरान मोहम्मद शाह ने चलाया था। इसके अतिरिक्त मीरान को मुगल बादशाह अकबर द्वारा सम्मानित भी किया गया था।

इस्माइल शाही– हाफिज मुहम्मद ईस्माइल ने यह शाखा लाहौर में चलाई।

दौलतशाही– यह सिलसिला बहाउद्दीन जकरिया की पीढ़ी के आठवीं पीढ़ी के सूफी फकीर दौलत शाह ने गुजरात में चलाया।

बे–शराअ अनुसार–लाल शाहबाज़िया–इस उप सिलसिले को बहाऊद्धीन ज़करिया के मुरीद लाल शाहबाज़ ने चलाया, इसकी आगे भी शाखाएं बनी

(1) लाल शाह बाजिया और **(2) रसूल शाही**। लाल शाह बाजिया शाखा के सूफी फकीरों को मदिरापान से विशेष प्रेम था। यह रवायत उनको नियामत उल्लाह से प्राप्त हुई जिसके बारे में प्रसिद्ध पंजाबी इतिहासकार जीत सिंह शीतल कहते हैं, "इस संप्रदाय दी प्रेरणा पीर नियामत उल्लाह तों लई गई सी। ओहनां नू मिसर देश विच्च किसे प्रकार दी मदिरा पिला दिती गई सी, तद तों ऐना ने इस रवायत नू सदा लई जारी रख्या।"[1] फलस्वरूप इस संप्रदाय के सूफी लोग शराब का सेवन करते हैं परंतु इस सिलसिले के अनुयायी बुरा मानते हैं। इस शाखा के मुरशिद और मुरीद इस्लाम धर्म की आवश्यक मान्यताओं का पालन नहीं करते हैं यानी कट्टर बातों से दूर भागते हैं। इस सिलिसले के फकीर अपने आप को ईश्वर की पत्नी और अल्लाह को पति के रूप में मानते हैं इसलिए सूफी फकीर नाक में नथनी और गले में माला या तसबी पहनते हैं। इस शाखा के संचालक लाल शाहबाज़ प्रसिद्ध सूफी फकीर का कलाम सारी दुनिया में प्रसिद्ध है जो इस परंपरा की प्रसिद्धि को स्पष्ट करता है–

> हो लाल मेरी पत रखियो बला झूले लालन
> सिंधड़ी दा, सेवन दा, सखी शाहबाज़ कलंदर
> दमा दम मस्त कलंदर.........

सुहागिया शाखा–इस उप सिलसिले को मूसा सुहाग नाम के व्यक्ति ने प्रचलित किया, जो अपने को प्रभु अल्लाह की स्त्री मानते हुए औरतों के कपड़े पहनते हैं मूसा सुहाग की मृत्यु पश्चात यह सिलसिला सदा सुहागन कहलाया।

---

1. शीतल, जीत सिंह (संपा.), सूफीमत अते कविता, पृ. 78.

रसूल शाही– रसूल शाही शाखा के सूफी फकीर भांग नशे का सेवन करते हैं और सर पर लाल और सफेद रुमाल बांधते हैं सर और मूछों के बाल मुंडवा कर और शरीर पर भस्म लगाते हैं।

उपरोक्त सुहरावर्दी सिलसिला के फैलाव से पुष्टि होती है चिश्ती संप्रदाय की भांति सुहरावर्दी सिलसिला भी सूफीमत से संबंधित प्रसिद्ध सिलसिला है जिसकी मुख्य संप्रदाय के अतिरिक्त आगे भी संप्रदाय प्रचलित हुई लेकिन कुछ नए सिद्धांतों को पालन करने अथवा कुछ नई रिवायतें जो सूफीमत के विपरीत होने के परिणाम से यह संप्रदाय का प्रचार प्रसार घटता चला गया।

2.5.3 कादरी सिलसिला :

कादरी संप्रदाय सूफियों की प्रसिद्ध संप्रदाय है इस संप्रदाय ने 12 वीं शताब्दी के प्रथम चरण में सिंध प्रदेश में सूफीमत का प्रचार शुरू किया, इस संप्रदाय के संस्थापक प्रसिद्ध सूफी संत विद्वान अब्दुल कादिर जिलानी (1078 से 1166) थे, जो बगदादी पीर के नाम से प्रसिद्ध थे।

भारत में कादरी सिलसिले का प्रचार–प्रसार 300 सालों बाद पीर शाह नियासत उल्लाह और नसीर उद्दीन मोहम्मद जिलानी समकालीन प्रसिद्ध सूफी फकीरों द्वारा किया गया, नसीरूद्दीन साहब को सैय्यद मोहम्मद गौंस भी कहा जाता था, उनका जन्म 1428 ईस्वी में अलीपों में हुआ। इस तरह भ्रमण करते हुए वह भारत आए और उच्च के स्थान को ठिकाना बनाया। जहां पहले ही सूफी संत निवास करते थे जो बाद मे ऊच्च के पीर के नाम से प्रसिद्ध हुए। इस समय सिकंदर लोदी का राज्य था, जो मोहम्मद गौंस के मुरीद भी हुए। इसी तरह अब्दुल कादिर जिलानी साहब को भी बहुत सम्मान मिला और उनको पीरों के पीर, दस्तगीर, महीऊदीन, गौस–उल–आजम, महबूब ए सुबहानी, हुसैन, हुसैनी आदि नाम लेकर संबोधित किया जाता रहा जो उनकी फकीरी को प्रमाणित करता है। इस संप्रदाय में खुदा की इबादत संबंधी चार माध्यमों को निश्चित किया गया है जिसके अंतर्गत यक जरबी, दो जरबी, से जरबी और चार जरबी इन सभी में अल्लाह की इबादत के लिए जोर दिया गया है।

इसके अतिरिक्त अब्दुल कादिर जिलानी साहब ने सूफीमत के प्रचार के लिए आवश्यक तथ्यों जिसके बारे में प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. नरेश अनुसार, ''धर्म प्रचार

लई अब्दुल कादिर जिलानी ने जो व्याख्यान दिते, ओ **अल–फतह–अल रब्बानी ते फतुह–उल–ग़ालिब** नामक ग्रंथां विच सुरख्यत हन। ऐना व्खायानां विच अब्दुल कादिर ने मनुख नू लौकिक ते आध्यात्मिक जीवन विच संतुलन कायम करन दी सिख्या दिती है।"[1] फतुह–उल–ग़ालिब की विशेषता को प्रकट करते हुए प्रोफेसर गुलवंत सिंह अनुसार, "फतुह–उल–ग़ालिब शेख जिलानी दी महत्वपूर्ण रचना है जो इस्लामी सूफीवाद दियां प्रमाणिक अते प्रमाणयोग किताबां विचों इक है जिसनू कादरिया संप्रदाय दीयां खानकाहां विच सूफीवाद नू जिवें समझाया अते सिखाया जादां है। उस किताब दी जानकारी प्राप्त करन लई उक्त किताब दा सार प्रस्तुत करन दा जतन कीता जांदा है।"[2] जो कादरी संप्रदाय के सूफी संतों या फकीरों की सच्ची इबादत का प्रमाण है इसी की भांति पंजाब में कादरी संप्रदाय से संबंधित प्रसिद्ध सूफी संत मियां मीर जी का नाम बहुत आदरणीय है जिनका पूरा नाम मीर मोहम्मद था। मियां मीर साहब की फकीरी का अंदाजा इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि सिख धर्म के पांचवें गुरु श्री गुरु अर्जुन देव जी से इनका बहुत लगाव था और श्री गुरु अर्जन देव जी ने पंजाब के जगत प्रसिद्ध गुरुद्वारा श्री हरमंदिर साहिब का नींव पत्थर भी सूफी संत मियां मीर जी से रखवाया, जो वर्तमान में गोल्डन टेंपल या स्वर्ण मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है जो कादरी संप्रदाय के सूफी संतों की सच्ची इबादत का प्रमाण है। मियां मीर हमेशा इबादत में लीन रहते थे उन्होंने लाहौर में सूफी खानकाह बनवाई, मुगल सम्राट शाहजहां का बेटा दारा–शिकोह भी कादरी संप्रदाय का मुरीद था जिसने मियां मीर के मुरीद मुल्लाह शाह की मुरीदी की प्रोफेसर गुलवंत सिंह अनुसार, ''दारा शिकोह ने 'सकीना तुल औलिया' विच मियां मीर दे कुज वाक प्रस्तुत कीते हन अते इह वी लिखया है कि जद किसे आयत जां हदीस दा अर्थ मीयां मीर ब्यान करदे सी तां सुणन वाले विद्वान दंग रह जांदें सन।"[3]

इसी की भातिं कादरी संप्रदाय से संबंधित पंजाबी सूफी कवियों में हज़रत सुल्तान बाहू, शाह हुसैन, बुल्ले शाह उनके मुरशिद हज़रत ईनायत शाह, हज़रत मियां मीर, मुल्लाशाह और मीर नत्था आदि सूफी फकीर इसी संप्रदाय से संबंधित

1. नरेश, सूफीमत अते सूफीकावि, पृ.52.
2. गुरमुख सिंह (संपा.), प्रो. गुलवंत रचनावली, पृ. 157.
3. वही, पृ. 161.

थे। इस संप्रदाय के फकीर अपने मुरशिद या ईष्ट की इबादत में मस्त होकर नाचते–गाते थे। प्रसिद्ध सूफी संत बाबा बुल्ले शाह इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं जो अपने मुरशिद की याद में गाते गाते बेसुध हो जाते थे और उन्हें हाल पढ़ा करते थे।

शुरू में चाहे इस संप्रदाय के सूफी फकीर संगीत को नफरत करते थे परंतु बाद में सूफी साधना करते हाल की अवस्था तक पहुंचने के लिए संगीत को माध्यम समझा गया.पंजाब के सूफी संतों में सुल्तान बाहू, बुल्ले शाह,शाह शरफ बटालवी आदि फकीरों द्वारा खुदा की इबादत के लिए सूफी काव्य की रचना की और संगीत के माध्यम से लोगों में कादरी सिलसिले का प्रचार प्रसार कर साधारण लोगों को इश्क हकीकी का पैग़ाम दिया।

अंतः स्पष्ट हो जाता है कि कादरी संप्रदाय ने सूफीमत के प्रचार–प्रसार से जहां समय की हकूमत को अपने प्रभाव से मुरीद बनाया, वहीं अपने सूफी कलामों के माध्यम से साधारण लोगों में नाचते गाते हुए प्रचार–प्रसार किया और सूफीमत के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2.5.4 नक्शबंदी सम्प्रदाय :

सूफीमत के अंतर्गत प्रसिद्धि सिलसिलों में नक्शबंदी संप्रदाय भी अपना विशेष महत्व रखता है इस संप्रदाय को ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबंदी द्वारा चलाया गया था और हिंदुस्तान में इस सिलसिले का प्रचार–प्रसार ख्वाजा बाकी बिल्ला द्वारा किया गया। इसी की भांति इस सिलसिले से संबंधित सूफियों द्वारा समय समय पर इस संप्रदाय का प्रचार किया गया है।

इस सिलसिले के नाम संबंधी विभिन्न मत प्रचलित हैं कि नक्शबंदी संप्रदाय के अनुयाई अपना जीवन व्यतीत करने के लिए कपड़ों पर चित्रों की छपाई करते थे दूसरी मान्यता अनुसार बहाऊदीन ऐसे सूफी संत थे कि गूढ़ से गूढ़ बातों का मानसिक चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ थे। परशुराम जी अनुसार, ''इस पंथ प्रवर्तक की नक्शबंदी पद्वी के विषय में कहा जाता है कि यह उन्हें कपड़ों पर चित्रों को छाप कर जीविका अर्जित करने के कारण मिली थी।''[1] इसके अतिरिक्त नक्शबंदी संप्रदाय के मुख्य सूफी प्रचारकों में से सर्वाधिक श्रेय अहमद फारूखी को मिलता है परिणाम स्वरूप इनको समकालीन हुकूमतों का सामना भी करना पड़ा।

1. चतुर्वेदी, श्री परशुराम, सूफीकावि संग्रह, पृ. 57.

दूसरी मान्यता अनुसार–हज़रत ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबंदी सिलसिले के अनुयायियों के अंदर आध्यात्मिक ज्ञान संबंधी रहस्यों का चित्रण कर देते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार गुरुदेव सिंह अनुसार, ''मन्या जांदा है कि जो रूहानी राहां दा राही अपनी रुहानी भुख त्रेह मिटाअण लई अपडदा सी तां आप अपनी रूहानी प्राप्ति दे बलबूते उस जिज्ञासु दे हृदय विच ही अध्यात्मिक संसार दा नक्शा बंन दिंदें सन,इस करके आप दा नां नक्शबंदी प्या।''[1]

इसी की भांति विद्वानों अनुसार इस सिलसिले के साधक अपने शरीर के साथ ताबीज़ बांधकर रखते थे जिसमें एक नक्श होता था जिसके कारण यह सिलसिले को नक्शबंदी सिलसिला कहा जाता है। भारत में नक्शबंदी सिलसिले का 3 साल तक प्रचार प्रसार करने का श्रेय बाकी बिल्लाह को ही जाता है। इनके उपरांत उनके मुरीद अहमद फारुखी हुए जिन्होंने अपने मुरशिद के नक्शे कदम पर चलते हुए सिलसिले का प्रचार प्रसार किया।

मक्के की यात्रा के दौरान फारूखी साहब का मिलाप बाकी बिल्ला से हुआ और बाकी बिल्ला की अध्यात्मिक बातों का गहरा प्रभाव फारुखी साहब पर हुआ और फलस्वरुप वो उनके मुरीद हो गए। गुरुदेव सिंह अनुसार ''आपनू मुजदिद (इस्लाम धर्म दा सुधारक) केहा गया जिस करके नक्शबंदी सिलसिले नू आप तो पिछों नक्शबंदी यह मुजदिदया सिलसिला आखण लग पए।''[2] हज़रत ख्वाजा बहाउद्दीन ने नक्शबंदी सिलसिले के साधकों के लिए कुछ नियमावली बनाई जिसका अनुसरण हर नक्शबंदी के लिए अनिवार्य था। जैसे :

- **होश–दर–दम** – अर्थात हर श्वास से अल्लाह को याद करना
- **नजर बर कदम** – अपनी नजर को हमेशा अपने कदमों की तरफ रखना
- **सफर दर बतन** – हमेशा अपने हृदय की पाकीज़गी की तरफ ध्यान रखना
- **याद करद** – हर समय अल्लाह की इबादत करते रहना
- **निगाह दाशत** – मन हर समय बुरे कामों से तौबा करता रहो
- **बाज गस्त** – दिलो दिमाग में हमेशा अल्लाह का नाम गूंजता रहे

---

1. गुरदेव सिंह, सूफीकाव दा इतिहास, पृ. 191.
2. वही, पृ. 192.

- **ख़ल्वत दर अंजुमन** – संसार में काम करते हुए भी अल्लाह की तरफ ध्यान रखें
- **याददाश्त** – हर समय अल्लाह की मौजूदगी का एहसास रहे
- **वुकूफे ए कल्बी** – अल्लाह का ध्यान करते वक्त मन को भटकने से रोकना
- **वुकूफे ए जमानी** – निरंतर आत्म विश्लेषण करते रहना
- **वुकूफे ए अददी** – इबादत करते वक्त गिनती करते रहना ता ताकि मन व्यर्थ के विचारों में ना उलझे

इसके अतिरिक्त सूफी परंपरा के इतिहासकार बिक्रम सिंह घुम्मण अनुसार, ''इस संप्रदा वाले अनुयायियाँ विच कायूमीयत दा सिद्धांत वी विशेष महत्व रखदा है, कयूंमियत संपूर्ण व्यक्तित्व तों उचेरे स्थान दा स्वामी हुंदा है अते हर वस्तु उत्ते प्रभुतव रखदा है।''[1]

नक्शबंदी सूफी फकीर दूसरे सूफीमत से संबंधित सिलसिलों की भांति अधिक शरीयत के नियमों अनुसार चलते थे और अपने मजबूत सिद्धांतों के अनुसार प्रचार करते थे इसी की भांति शेख अहमद फारूखी ने वहदत–उल–शहूद सिद्धांत का प्रचार किया। प्रोफेसर गुलवंत सिंह इसके बारे में कहते हैं, ''जिथों तक भारत विच इस्लामी सूफीवाद दा संबंध है मुजदिद दा कारनामा है कि उसने 'वहदत उल वजूद' अते सारे धर्मा दी एकता दा डट के विरोध कीता, उस दा विचार सी के जे वहदत उल वजूद दे विश्वास नू मन लईऐ तां फिर बंदे अते खुद विचकार फर्क नहीं रहंदा।''[2]

वहदत–उल–वजूद और वहदत–उल–शहूद के सिद्धांतों अनुसार यह सिलसिला आगे दो शाखाओं के रूप में प्रचलित हुआ जिसके अंतर्गत वहदत उल वजूद के अनुसार फिरोज़ाबादी सिलसिले के मुरीद और वहद्त उल शहूद सिलसिले के अनुसार चलने वाले मुरीद सरहंदीं सिलसिले के अनुयाई कहलाए। सूफी संगीत के खोजकर्ता डॉक्टर सतिंदरपाल सिंह कहते हैं कि, ''पंजाब सरकार द्वारा प्रकाशित पुस्तक में लिखा है कि नक्शबंदी परंपरा की बुनियाद पीर मोहम्मद ने रखी थी। इस

---

1. घुम्मण, बिक्रम सिंह(संपा.), पंजाबी सूफीकाव, पृ. 119.
2. गुरमुख सिंह(संपा.), प्रो, गुलवंत सिंह रचनावली, पृ. 165.

सिलसिले के प्रसिद्ध संगीतकार ख्वाजा अहमद नक्शबंदी का मकबरा सरहद जिला पटियाला पंजाब में है उनको मुजदिद अलिफ साहनी के नाम से जाना जाता है इस महान पदवी का अर्थ है कि ख्वाजा अहमद नक्शबंदी जाहरा पीर थे जो हज़रत मोइनुद्दीन साहब से 1000 साल बाद दूसरे पैगंबर बनकर लोगों को हक का रास्ता दिखाने आए थे।''[1] नक्शबंदी सिलसिले में संगीत की अनुमति नहीं थी लेकिन फिर भी किसी ना किसी रूप में यह सिलसिला संगीत का प्रयोग करता रहा क्योंकि जब इस संप्रदाय के फकीर साधना या बंदगी करते थे तो एक लाइन में नाच करते थे जो सूफी फकीरों को अपनी आध्यात्मिक चरम अवस्था तक पहुंचने में कारगर सिद्ध होता, तो कह सकते हैं कि कहीं ना कहीं नक्शबंदी अनुयाई भी संगीत के साथ जुड़े हुए थे। इस संप्रदाय के सूफी फकीरों की सच्ची इबादत का प्रमाण है कि अफगानिस्तान और पिशौर के इलाके के लोग भी आपके मुरीद थे। वर्तमान में भी सरहंद रोज़ा शरीफ में इस शाखा के अनुयाई आज भी भारी संख्या में रोज़े की जियारत के लिए आते हैं। इस सिलसले के सूफी फकीर अथवा श्रद्धालु चुपचाप बैठ कर सर झुका कर और आंखों को नीचे की तरफ झुका कर अल्लाह का ध्यान करते हैं। नक्शबंदी सिलसिले संबंधी चर्चा से पुष्टि होती है कि सूफीमत के प्रचार–प्रसार में सूफी परंपरा के विभिन्न सिलसिलों की भांति नक्शबंदी सिलसिले के सूफी फकीर भी सूफीमत पथ के सच्चे पथ प्रदर्शक रहे।

उपरोक्त सूफी परंपरा के उद्भव एवं विकास संबंधी की गई वार्तालाप से स्पष्ट हो जाता है कि सूफी परंपरा सच्चे मुस्लिम सूफी साधकों की लहर थी जो इस्लामी शरा में कट्टर सोच के विरोध में उठी ।सूफी फकीरों के मत अनुसार उस अल्लाह ईश्वर की इबादत के लिए सारी कायनात से प्रेम करना ही उस परम सत्ता की इबादत का पहला चरण है। जिसके लिए सूफी साधको ने इश्क मिजाजी से इश्क हकीकी को प्राप्त करने के लिए प्रचार करना शुरू किया। धीरे–धीरे सूफी परंपरा का प्रचार प्रसार इस्लामिक देशों से व्यापारिक संबंध रखने वाले सरहदी देशों में भी फैलता गया परिणामस्वरूप सूफी परम्परा के विभिन ठिकाने उद्भव हुए। पश्चात वही ठिकाने सिलसिलों के रूप में प्रचारित हुए। मुख्य रूप में सूफी परंपरा के चार सिलसिले स्थापित हुए।

---

1. सतिंदरपाल सिंह, सूफी गायन परम्परा का साहित्यिक एवं सांगीतिक अध्ययन, पृ. 30.

जिसके अंतर्गत चिश्ती ,सोहरावर्दी, कादरी, नक्शबंदी। इन सिलसिलों के सूफी फकीरों की सच्ची भावना के परिणामस्वरूप ही सूफी परम्परा वर्तमान में विश्व विख्यात है।

———